देवबणी री बात

कृपाविस का सामुदायिक जंगल 'देवबणी/ओरण' संरक्षण अभियान

अंक 16 अप्रेल 2010

विभाग नहीं, सामुदायिक भागीदारी आवश्यक है वन्य जीवों के संरक्षण के लिए

वन्य जीव संरक्षण हेतु वन विभाग से अलग एक अन्य वन्यजीव विभाग बनाने का फैसला पिछले दिनों केन्द्र सरकार ने लिया। जिसको तथाकथित वन्यजीव विशेषज्ञों ने वन्यजीव संरक्षण हेतु संजीवनी करार दिया। राजस्थान राज्य में स्थित दो राष्ट्रीय वन्यजीव उद्यान, 25 संरक्षित वन्य जीव अभ्यारण्य और 32 शिकार निषिद्ध क्षेत्र के वन्य जीवों की देख–रेख के लिए अलग विभाग बनाने की बात भी जोर पकड़ रही है। सरकारी आँकडों के आधार पर राजस्थान में 9.5 वन क्षेत्र हैं – जिनमें 490 पक्षी, 80 स्तनधारी, 70 रेगने वाली और 14 उभयचारी प्रजातियां विचरण करती हैं। ये वन और वन्य प्रजातियां ओरण/ देवबणियों को मिलाकर हैं।

वर्तमान में राजस्थान में जंगल बचाने की 2 व्यवस्थाएँ है– जंगलात विभाग द्वारा क्लोजर (दीवार–बन्दी) तथा दुसरी समुदाय द्वारा संचालित ओरण व्यवस्था। यद्यपि ये दोनों व्यवस्थाएँ प्रबंधन तथा जंगलों पर कानून लागू करने की व्यवस्था हैं। लेकिन क्लोजर व्यवस्था जिसमें अरबों–खरबों रूपया खर्च होने के बाद भी जंगल व वन्य जीव संरक्षण के अपेक्षित परिणम नहीं आ रहे हैं वही दूसरी तरफ ओरण व्यवस्थाजो समुदायों द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक अलिखित नियमों के तहत संचालित है तथा जिसमे बिना किसी खर्च के जंगल आठ शताब्दियों से बच रहा है।

ओरण/ देवबणियों की संख्या राज्य में लगभग 25000 है। इनकी सुरक्षा हेतु किसी विभाग की जरूरत नहीं

KRAPAVIS

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस)

कृपाविस वणी, गांव-बख्तपुरा

पो० सिलीसेढ, जिला अलवर-301001 (राज.)

ई-मेल:krapavis_oran@rediffmail.com

सम्पादन : अमनसिंह व प्रतिभा सिसोदिया

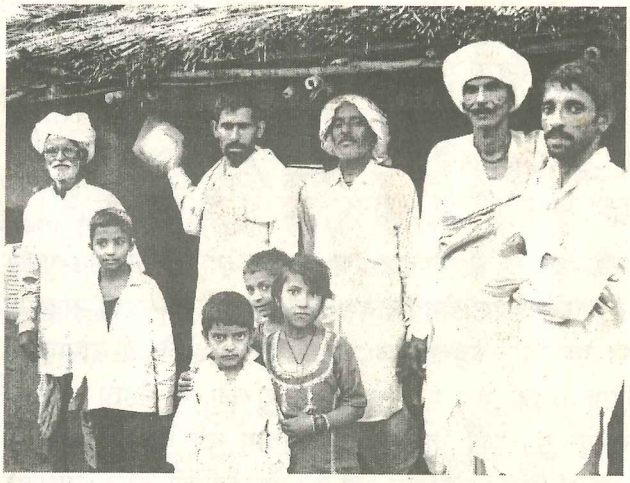

पड़ती। फिर प्रदेश के 27 वन्यजीव अभ्यारणों की सुरक्षा हेतु क्यों अलग विभाग की आवश्यकता है। सरिस्का का उदाहरण देखे तो वह भी लगभग एक दर्जन देवबणियों का समन्वित स्वरूप है, दूसरे वन्यजीव अभ्यारणों की स्थिति भी कुछ ऐसी ही होगी।

आज समुदायों को इन जंगलों का दुश्मन समझा जाने लगा है। पिछले एक दशक से राज्य में, बाघ संरक्षण के लिए सरिस्का अभ्यारण्य में बफर जोन बनाने, अभ्यारण्य के बीच बसे गाँवों का का पुनर्स्थापन करने जैसे कृत्य हो रहे है जो बहुत सफल प्रतीत नहीं है। एक तरफ मानव विहिन अभ्यारण्यों की बात हो रही तो दूसरी तरफ जंगल के अन्दर स्थित किलों/महलों का पुनरोत्थान कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जा रहा है जो एक तरह से यहाँ के समुदायों के साथ धोखा है। नवगठित 'बाघ संरक्षण फाउण्डेशन' भी शायद ही समुदायों की भागीदारी का महत्व समझे।

हाल ही में राजस्थान वन नीति 2010 बनी है। उसमें पर्याप्त प्रावधान है कि सरकार और लोग मिलाकर जंगल बचाये। यदि इस वन नीति का सही रूप से क्रियान्वय हो सके तो किसी अन्य विभाग की आवश्यकता नहीं है। सामुदायिक पद्धतियां जैसे ओरण व देवबणी आज भी जंगल, वन्य प्राणियों तथा समुदायों की आजीविका बचाये रखने के लिए कारगर व उपयुक्त है। अतः इन पद्धतियों द्वारा संरक्षण व पुनरोत्थान पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है, नये विभाग बनाने पर नहीं।

देवनारायण देवबणी : जहाँ पशुओं व वन्य प्राणियों को मिलता है भरपूर चारा – पाणी

देवनारायण जी की देवबणी लोज गाँव में स्थित है। लोज गाँव अलवर जिले की बानसूर तहसील में पडता है। भौगोलिक दृष्टि से यह गाँव सरिस्का बाघ परियोजना के कोर क्षेत्र 2 में स्थित है। इसमें लगभग 25–30 घर है जो सभी गुर्जर जाति के लोग है। इसका मुख्य व्यवसाय पशुपालन है। इस गाँव की जनसंख्या लगभग 300 है। इसमें पशुओं की संख्या भैस 600, गाय 200 बकरी 1000, ऊँट 45 है। लोज गाँव में पूरी तरह से चरवाहा समुदाय है। जो कहा जाता है कि रामपुर व नारायणपुर से आकर यहाँ बस गये थे। पुरातत्व साक्ष्यों के आधार पर माना जाता है कि लोज कभी के जमाने के अलवर शहर से भी विकसित था।

यहाँ देवबणी में देवनारायण भगवान का मंदिर है। गुर्जर समुदाय के इष्ट देवनारायण इस देवबणी के सच्चे संरक्षक है। देवबणी में देवनारायण जी की पूजा यहाँ के श्री रामावतार भोपा करते है। भोपा देवबणी सुरक्षा में महती भूमिका निभाते है। यहाँ के ग्रामीण समुदाय का देवबणी संरक्षण कार्य में विशेष योगदान रहा है। यह देवबणी लोज, नाथुसर तथा आस–पास के गाँवों के लोगों की संस्कृति, आस्था का केन्द्र है। इस देवबणी को बचाने के लिए गाँव वालों ने नियम बना रखे है। लोज गाँव की औरते अपना दैनिक काम करती है, जैसे–सुबह जल्दी काम करके जंगल को चली जाती हैं। फिर वहाँ लकड़ी अपने सिर रखकर लाती है। जिसका वजन लगभग 60 किलो होता है और फिर अपना घर का काम करती है।

इस देवबणी में देशी बबूल, कैर, हींगोटा, नीम, पीपल तथा विभिन्न तरह की औषधीय गुण की विभिन्न प्रजातियों जैसे कदम, बेर, बीलपत्तर, गझींडा, धोंक, ढाक, गुलर, कैर आदि के वृक्ष पाये जाते है। कैर को औषधीय व आजीविका दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है। तभी तो इनके संरक्षण पर विशेष जोर है। कैर केपेरिस डेसीडुआ एक घने समुहों वाली झाडी है। झाड़ी रेत को रोक लेती है तथा उत्तम वायु अवरोधक है। इसकी लकडी दीमक रोधी होती है। इसके कच्चे फल, टेंटी सब्जी तथा अचार में खूब काम आते है। यह राजस्थान की सूखी सब्जियों 'पंचकूट' कैर, कमूटा बीच, कचरी, कुकुमिस, सेंगरी, खेजडी की फली तथा कम डंडी का एक भाग है। इसकी पत्तियां व शाखाएं बहुत सारी परम्परागत औषधियों के काम आती है। खैर (केशिया कटेचू) यहां बहुतायत में उपलब्ध था जो पान एवं गुटकों से लेकर आयुर्वेद की दवाओं के निर्माण में प्रयुक्त होने वाले खैर पर बढ़ता संकट इसके अस्तित्व पर प्रश्न

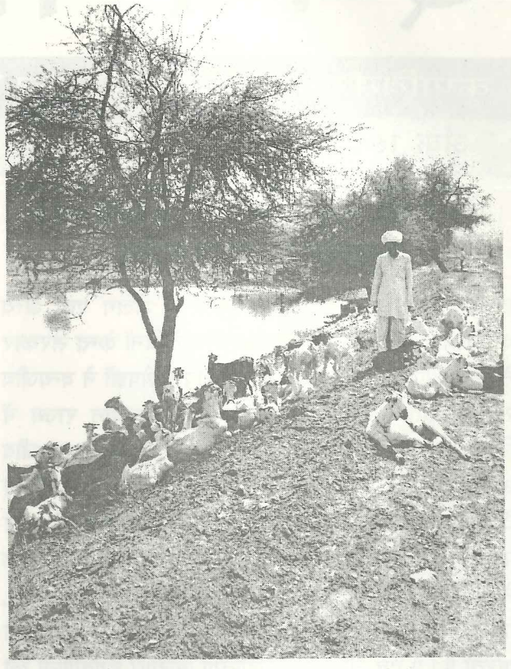

चिन्ह लगा रहा है। खैर की हर्टवुड की उपयोगिता ही सर्वाधिक होती है। सूखे वृक्ष में 15 से 30 प्रतिशत कत्था प्राप्त होता है। वन विभाग के आँकडों से भी यह बात स्पष्ट है कि यहाँ खैर तेजी से खत्म होता जा रहा है।

जैव–विविधता की दृष्टि से इस औरण में अनेकों वन्य प्राणी जैसे –हिरण, नील–गाय, सांप, नेवला, बिच्छू, गोह, गीदड तथा वन्य पक्षियों– मोर, तोता, मधुमखियां तथा अनेक प्रकार की चिड़ियाएं विद्यमान है। इन सब प्राणियों की प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने में बडी भूमिका है। यह बात भी उल्लेखनीय है कि ये वन्य प्राणी यहां के समाज व धार्मिक स्थली के बलबूते पर ही बचे हुय है। देवबणी के भोपा रोजाना पक्षियों को यहाँ पर चुग्गा डालते है।

इस देवबणी में लोज के अलावा, बीणक तथा नाथूसर के पशु चरते है। जब गाँव वाले पशुओं को लेकर गर्मी के मौसम में पलायन करते है। उस समय महिलाएं घर पर आराम करती हैं। लेकिन खाली समय में जंगल से कुछ खजूर लाती है, जिनसे झाडू, बिजनी, ईंडी आदि बनाकर अपना घर का काम चलाती है। श्री छीतरराम, खुशीराम, पाच्याराम, नन्दराम, पप्पू आदि गाँव वालों ने बताया कि उसकी भैंस का दूध 20–25 रूपये प्रति लीटर तथा

बकरी का दूध 15–20 रूपये प्रति लीटर के हिसाब से चला जाता है। दो–तीन पशुपालक जो मावा का काम करते हैं, वे दूध खरीद कर घर पर मावा बनाते है। फिर उसे थानागाजी व बानसूर में बेचा जाता है। आर्डर के हिसाब से भी मावा मंगाया जाता है। अगर मावा ज्यादा चाहिए तो फिर मालाखेड़ा, बीजवाड़ गाँवों से भी दूध खरीद कर लाया जाता है और फिर मावा निकाला जाता है। मावा बनाने का काम करने वाले श्री ओमकार ने बताया कि मावा 130 रूपये के हिसाब से बेचा जाता है।

देवनारायण जी की देवबणी में एक बडा जोहड, कुआं व खेलिया है। जिनका पुनरोत्थान व मरम्मत का कार्य वर्ष 2010 के शुरूवात में कृपाविस संस्था बख्तपुरा अलवर के सहयोग से किया है। इस देवबणी के संरक्षण हेतु एक समिति नाथूसर के श्री राजेन्द्र सिंह की अगवाई में बनी है। समिति के सदस्यों ने कृपाविस प्रशिक्षण केन्द्र बख्तपुरा में आकर प्रशिक्षण भी लिया है। लोज के युवा श्री राम लाल ने कृपाविस में दस्तावेजी प्रशिक्षण लिया है।

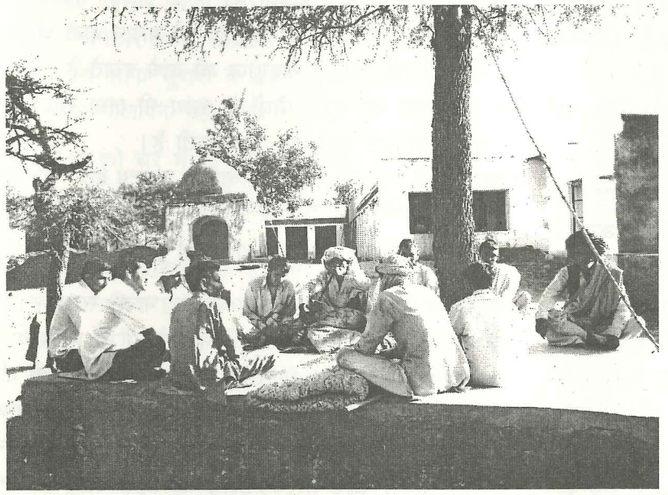

इस देवबणी के प्रबन्धन कार्य को देखने के लिए देश के जाने माने पर्यावरण विद्ध श्री आशीष कोठारी तथा डॉ. नीमा पाठक, मार्च 2010 में यहाँ आये तथा देवबणी प्रबन्धन कार्यों को देखकर यहाँ के समुदाय की सराहना की। लीजा इंडिया की सम्पादक श्रीमती टी. राधा भी अपनी पत्रिका के लिए लोज–नाथूसर की केस स्टेडी लिखने यहाँ पंहुची।

बाघराज की देवबणी सिरावास

देवनारायण जी की देवबणी लोज के समीपवर्ती सिरावास गाँव प्राकृतिक मनोरमा से परिपूर्ण गर्वा सिद्ध की तपो भूमि के कारण अपना अलग ही स्थान रखता है। इस गाव की जनसंख्या 750 के आस–पास है इसमें मुख्यतः गुर्जर चरवाह समुदाय के लोग निवास करते है। यहाँ बाघराज नामक देवबणी है। इस देवबणी में पालतू पशुओं के स्वतंत्र विचरण के कारण देवबणी में काफी बिगाड हुआ है।

इस देवबणी का क्षेत्रफल 15 हैक्टेयर है। इस देवबणी में गूलर, पापडी, गूदी, सावर, धोक, जाल, कडियाला, कदम्ब, गूगल, कीकर आदि के वृक्ष पाये जाते है। नीरा, वट वृक्ष, संरक्षण अभाव के कारण 15–20 सालों से विलुप्त हैं पीपल वृक्ष व वट वृक्ष को पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। विभिन्न तरह की औषधीय गुण की प्रजातियों जैसे – कदम, बेर, बीलपत्तर, गझींडा, कैर आदि के वृक्ष पाये जाते है। आक यानि आँकडे का पौधा जिसे लेटिल में कैलोट्रोपिस जाइगैण्टिया के नाम से जाना जाता है। यह आधे सिर का दर्द, घट्टापेट दर्द, दस्त, तिल्ली, यकृत आदि पेट के सभी रोग, सर्दी, खांसी, ज्वर, मलेरिया आदि बीमारियों के परम्परागत उपचार में बहुत उपयोगी है।

बाघराज देवबणी में ढाक बहुतायत में पाया जाता है। ढाक ब्यूटिया मोनोस्पर्मा एक देशज व मध्यम आकार का पतझडी पेड़ होता है। इनकी लकडी पूजनीय मानी जाती है। इसकी छाल से लाल राल, रेजिन मिलता है जिसकी औषधीय उपादेयता है। जड़ों से गर्भ निरोधक औषधी बनाई जाती है। ढाक के बीज खाने से पेट के कीडे मर जाते है। इसके फलों से नांरगी–पीला रंग प्राप्त होता है तथा इसकी शाखाओं पर लाख का कीट अच्छा पनपता है। यदि आँकडे के पत्ते, फूल या अन्य कोई भाग अधिक सेवन करने से विष उत्पन्न हो गया तो ढाक के पत्तों को उबालकर पानी पीने से आँकडे की विषाक्ता दूर हो जाती है। वटवृक्ष की लटें जडों के रूप में जमीन में फैलकर मिट्टी के कटाव को रोकती है व पीपल वृक्ष वैज्ञानिक दृष्टि से ऑक्सीजन उत्सर्जित करता है।

कृपाविस संस्था ने बाघराज की देवबणी में कई वटवृक्ष व पीपल वृक्षों को संस्था कार्यकर्ता द्वारा एवं ग्राम समाज जन सहयोग द्वारा रोपण किया है। तथा संरक्षण कार्य संस्था व जनसहयोग द्वारा किया है। महिला मण्डलों के गठन करने से महिलाओं में बचत की भावना आपसी सहयोग से विचार विमर्श कर सर्वांगीण विकास के लिए प्रेरित किया है।

दीनानाथ घास : दीनों के साथ

दीनानाथ, पेनिसटम/ दीनानाथ या पोएसी कुल का पौधा है। इसे दीनानाथ घास या नाईजीरिया घास भी कहा जाता है। भारत में दीनानाथ घास के नाम से जाना है। दीनानाथ एक चारा घास है जो जानवरों द्वारा शोक से खायी जाती है। दीनानाथ घास उत्तरी उष्णकटीबंधीय अफ्रिका तथा भारत में बहुतायत में पाया जाता है। संसार में पेनिसटम की कई प्रजातियां पाई जाती है जो इस प्रकार है – पेनिसटम एमोइनम, पेनिसटम डाइनसिफ्लोरम, पेनिसटम डिलोनी, पेनिसटम इम्लीकेटम आदि।

पेनिसिटम/दीनानाथ घास को प्रभावित करने वाले कारक–

❖ मृदा – दीनानाथ घास चिकनी मिट्टी, बलूई मिट्टी, तथा खाद मिली हुई मिट्टी आसानी से उग जाता है। दीनानाथ घास को बोते समय मिट्टी में पर्याप्त नहीं होनी चाहिए। यह अम्लीय व क्षारीय दोनों मिट्टी में आसानी से उग जाती है।

❖ तापमान – दीनानाथ घास की अच्छी उपज के लिए 30–35 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है। दीनानाथ घास में सूखा झेलने की अपार क्षमता होती है।

❖ वर्षा – दीनानाथ घास के लिए 500–600 मिमी. वर्षा उपर्युक्त रहती है।

दीनानाथ घास को बोने का समय मई–जुलाई के बीच होता है क्योंकि उस समय तापमान तथा वर्षा दोनों इसके अनुकूल रहते हैं। वैसे तो दीनानाथ घास का प्रवधन स्वत: होता है। क्योंकि यह लगभग सारे ही उर्वर बीज उत्पन्न करता हैं। दीनानाथ के बीज हवा के द्वारा फैलाये जाते हैं। बुवाई करते समय ध्यान में रखना चाहिए कि दीनानाथ घास के बीज को खेतों में छीटना नहीं चाहिए बल्कि उन्हें एक सीध में बोना चाहिए।

फसल की कटाई – दीनानाथ घास को साल में कई बार चारे के रूप में काटा जा सकता है। दीनानाथ घास को सूखाकर भी रखा जा सकता है। कुछ देशों जैसे – नाइजीरिया, लिमोन तथा भारत में इसका संरक्षण भी किया जाता है। दीनानाथ घास को बोने के 60 दिनों बाद चारे के लिए काटा जा सकता है।

चारे की गुणवत्ता – दीनानाथ घास चारे के रूप में प्रयोग में लाया जाता है, क्योंकि इसका 55–77 प्रतिशत जानवरों द्वारा पचा लिया है। 100 ग्राम चारे में 5.5 ग्राम क्रुड प्रोटीन, 33 ग्राम क्रूड रेशे, 11.7 ग्राम राख, 28 ग्राम ईथर एक्सट्रेक्ट तथा 45.0 ग्राम नाइट्रोज मुक्त एक्सट्रैक्ट होता है। जबकि 100 ग्राम संरक्षित किये चारे में इसकी मात्रा बढ़ जाती है। 100 ग्राम संरक्षित चारे में 5.7 ग्राम राख, 1.9 ग्राम ईथर एक्सट्रेक्ट तथा 38.0 ग्राम नाइट्रोज मुक्त एक्सट्रेक्ट होता है। दीनानाथ घास में ऑक्जेलिक अम्ल बहुत ही कम मात्रा में होता है, इसलिए यह जानवरों द्वारा आसानी से खाये जा सकने वाला स्वादिष्ट चारा होता है।

उत्पादन तथा लाभ – दीनानाथ घास बहुत ही बढ़ता है तथा इसमें टीलर की संख्या की अधिक होती है। इसके साथ ही साथ इसके पत्ती / तना का अनुपात भी बहुत अधिक रहता है। इन सब विशेषताओं की वजह से इसका बायोमास बहुत अधिक हो जाता है। दीनानाथ घास 2 टन/ हेक्टेयर/ साल चारा उत्पन्न करता है।

1. दीनानाथ घास का उपयोग हरे चारे के रूप में किया है।
2. दीनानाथ घास की पत्तियों को सुखाकर इसका संरक्षण भी किया जा सकता है।
3. यह मिट्टी के बाँधे रखता है।
4. इस घास की जड़ों में नाइट्रोज को बांधने वाले जीवाणु होते है जो मिट्टी में नाइट्रोज को बांधे रखते है।
5. इस घास को दूसरे पौधों के साथ भी लगा सकते है अर्थात् मिश्रित खेती की जा सकती है।

(यह लेख डॉ. सत्यवती शर्मा, आई.आई.टी. व अन्य द्वारा 'कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान' कृपाविस के माध्यम से प्रसार हेतु)

''भारत सरकार की चारा व चराई विकास योजना''

चराई एवं चारा विकास से सम्बन्धित भारत सरकार की विभिन्न योजनाएं संचालित है। विभिन्न राज्यों में पडने वाले अकाल एवं सिंचित हेतु पानी की कमी से चारा फसलों की कमी हो रही है अत: नवीन तकनीकों के माध्यम से संरक्षण व उपयोग लेने की आवश्यकता है। ये योजनाएँ पशु–पालन विभाग, डेयरी और मत्स्य पालन के तहत लागू है। वर्ष 2010 से यह योजना संशोधित की गयी है तथा रूपये 141.40 करोड की यह योजना निम्नलिखित नयी प्रौद्योगिकी घटकों के साथ लागू की जा रही है।

- फीड परीक्षण प्रयोगशालाओं का सुदृढ़ीकरण
- चारा कटाई मशीनों का इस्तेमाल पर जोर
- साइलेज इकाईयों की स्थापना करना
- अजोला खेती का प्रदर्शन और उत्पादन इकाइयों की स्थापना
- बाईपास प्रोटीन इकाईयाँ की स्थापना
- क्षेत्र विशिष्ट खजिन मिश्रण (ASMM)/ फीड पलेटिंग/ फीड विनिर्माण इकाइयों की स्थापना

बदलते मौसम में पशुओं की देखभाल

प्र.1 अब गर्मी का मौसम शुरू हो गया है। ऐसे में पशुओं की देखभाल कैसे करनी चाहिए।

उ. गर्मी के मौसम में पशुओं को तापघात से बचाना चाहिए।

प्र.2 तापघात से क्या अर्थ है, उसके बारे में समझाइये।

उ. तापघात का अर्थ है, अत्यधिक गर्मी अर्थात् हमें पशुओं को अत्यधिक गर्मी से बचाना चाहिए।

प्र.3 पशुओं को तापघात से कैसे बचाया जा सकता है और क्या–क्या उपाय कर सकते है।

उ. तापघात से बचने के लिए पशुओं को सीधे धूप वाले स्थान पर नहीं बाँधना चाहिए। पशुओं को शेड (बाडा) में रखना चाहिए। बाडे के ऊपर लोहे की चद्दर के स्थान पर खपरेल अथवा सीमेन्ट की चद्दर लगानी चाहिए जिससे ऊपर से गर्मी से बचाव हो सके। चद्दर के स्थान पर छप्पर भी बांधा जा सकता है। पशुओं का आवास साफ सुथरा व हवादार होना चाहिए। नमी अथवा गीलापन नहीं होना चाहिए।

प्र.4 पशुओं को घर में तो गर्मी से बचाया जा सकता है परन्तु जंगल में पशुओं को गर्मी से कैसे बचाया जा सकता है।

उ. दोपहर में लगभग 12 बजे से 2 बजे के मध्य गर्मी सबसे अधिक होती है और सूर्य की किरणें सीधी जमीन पर पड़ती है, ऐसे समय में पशुओं को छायादार पेड़ों के नीचे रखना चाहिए जिससे उन्हें धूप लू से बचाया जा सके। साथ ही ऐसे समय में एक ही स्थान पर खड़ा नहीं रखना चाहिए। उनको आगे चलाते रहना, जिससे धूप का प्रकोप कम हो।

प्र.5 इसके अलावा और किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

उ. हमें ध्यान रखना चाहिए कि गायों की अपेक्षा भैंसो की गर्मी सहने की क्षमता कम होती है। ऐसे में भैंसों को गर्मी से विशेष रूप से बचाना चाहिए। गर्मी के दिनों में पशुओं को खूब पानी पिलाना चाहिए, दिन में कम से कम 3–4 बार पानी पिलाना चाहिए। पानी स्वच्छ और साफ होना चाहिए। पशुओं को सुबह शाम नहलाने से भी गर्मी से काफी राहत मिलती है।

प्र.6 इस मौसम में पशुओं को नया तूडा, भूसा खिलाने से कई बार पशुओं में पेट दर्द की शिकायत हो जाती है ऐसे समय क्या सावधानी बरतनी चाहिए।

उ. जब भी पशुओं को दूसरा नया चारा या तूडा खिलाना हो तो एक साथ ही नया चारा नही खिलाना चाहिए। शुरूआत में 1 हिस्सा नया चारा एवं 3 हिस्सा पुराना चारा मिलाकर खिलाना चाहिए। कुछ दिन बाद आधा नया एवं आधा पुराना चारा मिलाकर खिलाना चाहिए। इस तरह पुराने चारे की मात्रा धीरे–धीरे कम करते हुए नया चारा खिलाना चाहिए। इसके साथ ही तूडे को छानकर खिलाना चाहिए जिससे मिट्टी आदि नहीं जाये तथा तूडे को 1–2 घंटे भिगोकर खिलाना चाहिए। इस तरह खिलौने से पशुओं को पेटदर्द अपच की शिकायत नहीं होती है।

प्र.7 यदि किसी पशु को लू लग जाए तो क्या करना चाहिए।

उ. पशु को लू लगने पर सबसे पहले ठण्डे पानी में कपडा भिगोकर पूरे शरीर को कई बार पोंछना चाहिए जिससे पशु को थोडा आराम मिले तथा तुरन्त नजदीकी पशु चिकित्सक को बुलाकर इलाज कराना चाहिए ऐसी स्थिति में डेस्टोज अथवा सेलाइन ड्रिप द्वारा चढाया जाता है।

प्र.8 वर्षा ऋतु में पशुओं में होने वाली बीमारियों की रोकथाम हेतु टीकाकरण क्या गर्मियों में करवाना चाहिए।

उ. पशुओं में मुख्य रूप से गाय व भैंसो में गलघोंटू एवं फडक्या जैसी जानलेवा बीमारियाँ होती है जिनके बचाव हेतु वर्षा ऋतु शुरू होने से पहले मई एवं जून के महिने में टीके लगवा लेने चाहिए। जिससे पशुओं को अकाल मृत्य से बचाया जा सकता हे।

प्र.9 गलघोंटू और फडक्या क्या होता है इसके क्या–क्या लक्षण होते है।

उ. गलघोंटू रोग में पशुओं को अचानक तेज बुखार हो जाता है, पशु काँपने लगता है और नाक व आँखों से पानी गिरने लगता है। पशु को श्वास लेने में परेशानी होती है और घर्र–घर्र की आवाज आने लगती है तथा अन्त में पशु की मृत्यु हो जाती है। फडक्या रोग को लंगडा बुखाकर भी कहते है। इस रोग में भी पशु को तेज बुखार आता है। पशु चलने में असमर्थ हो जाता है, पैरों के ऊपरी हिस्सों में सूजन आ जाती है और चमड़ी को दबाने पर चर्र–चर्र की आवाज आती है।

प्र.10 यदि किसी पशु को गलघोंटू और फडक्या रोग होने पर क्या करना चाहिए।

उ. तुरन्त नजदीकी पशु चिकित्सक से इलाज कराना चाहिए।

प्र.11 इस बदलते मौसम में भेड–बकरियों के लिए क्या सावधानी बरतनी चाहिए।

उ. इस मौसम में फसल कटाई के बाद भेड–बकरियाँ खेतों मे चरने जाती है जहाँ पर अधिक चारा खाने के लिए फडक्या रोग हो जाता है। जिससे भेड–बकरी जोर–जोर से पुकारती है एवं पेट दर्द के कारण फडफडाती है। इसलिए अप्रेल–माह में भेड–बकरियों में फडक्या रोग के बचाव हेतु टीके लगवा लेने चाहिए।

प्र.12 कुछ पशुपालक अपनी भेड–बकरियों को वर्षा ऋतु से पहले पैनाकुर की दवाई पिलाते है क्या यह सही है।

उ. पैनाकुर एक कृमिनाशक दवा है जो सभी भेड़–बकरियों को वर्षा ऋतु शुरू होने से पहले अवश्य पिलानी चाहिए और हर 2–3 माह में एक बार पिलाना चाहिए। इससे पशु स्वस्थ रहते है और दस्तों से बचाव होता हे। आजकल बाजार में पैनाकुर के अलावा अन्य दवाईयाँ जैसे– हाइटैक, इरजान आदि भी मिलती है। पशुपालक को दवाई देने से पहले पशुचिकित्सक को एक बार अवश्य दिखा लेनी चाहिए।

(डॉ. सीताराम वर्मा, पशुपालन विभाग के साक्षात्कार के आधार पर)

पशु उपचार के कुछ देशी नुक्शे

जेर न डालना : गूलर की गोल 300–400 ग्राम को पहले अच्छी तरह कूट कर उसमें 400 ग्राम गुड मिलाकर गर्म करते है और फिर उसे ठण्डा करके कपडे से छानकर पशु को दिया जाता है। बथुआ 1 किलो ग्राम लेकर उसमें 250 ग्राम गुड मिलाकर गर्म करने के बाद छानकर पशु

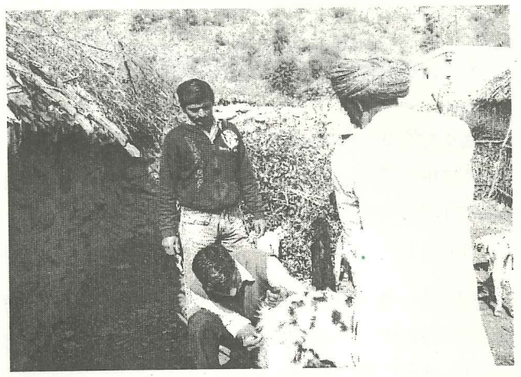

को दिया जाता है।

बन्द लगने पर : 50 ग्राम सौंठ 50 ग्राम हल्दी 50 ग्राम काला नमक 500 ग्राम बूरा या देशी खाण्ड और 200 ग्राम मीठा सोडा को अच्छी तरह कूट कर या पीस कर पशु को नाल द्वारा दिया जाता है। तरबूज का छिलका हटाकर उसे अच्छी तरह मथ लेने के बाद उसके सारे बीज निकालकर जो पानी बनता हे उसे नाल द्वारा पशु को दिया जाता है। आफरा आने पर : आदमी का पेशाब या चाय को पीसकर फिर पानी में गर्म करने के बाद उसे ठण्डा करके नाल द्वारा पशु को दिया जाता है।

जहर में आना : जहर में आने पर पशु को 4–5 लाल मिर्च, लहसुन 1 पोथ को अच्छी तरह पीसकर आदमी के पेशाब में मिलाकर देने से जहर उतर जाता है।

पोंक/ दस्त : इसमें बाजरे को रांद कर फिर उसे ठण्डा करने के बाद एक दिन के लिए हवा लगने के लिए रख देते है। फिर पशु को खिलाने से यह रोग हट जाता है। जैसे – सुबह का रंदा बाजरा शाम को और शाम का रंदा बाजरा सुबह देना चाहिए।

बीमार पशु की पहचान किस प्रकार करनी चाहिए: पशु जुगाली करना पशु कम देता है या बन्द कर देता है। कान नीचे और लटके रहते है। आंखों में गंदगी या गीड होना। पशु का समूह से अलग रहना। गर्दन शरीर की तरफ मूडी रखना। चारा पानी कम देना। पशु के नथूने पर पानी जैसी चमक नहीं होना। पशु शरीर पर हाथ फेर कर ठण्डा गर्म देखना। पैरों में छाले होने पर पशु पालक को नीम की पत्तियों द्वारा गर्म पानी से या लाल दवा से अच्छी तरह रोज साफ करना चाहिए। जिससे उनके घाव ज्यादा नहीं बढ पाते है। पशुपालक को पशु को गेहूं का तूडा चराते समय तूडे को पहले थोड़ा गीला कर लेना चाहिए जिससे पशु को तूडा खाने में आसानी रहती है और पशु के मुंह में तूडा लगने का डर भी नहीं रहता है।

(तारा सिंह चौधरी, L.S.A. कृपाविस)

पशु स्वास्थ्य ग्राम स्तरीय कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण 2010

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस) लगभग प्रतिवर्ष एक माह अवधि का पशु स्वास्थ्य ग्राम स्तरीय प्रशिक्षण का आयोजन करता है। इस वर्ष का प्रशिक्षण जुलाई 2010 में शुरू होगा जो तीन चरणों में आयोजित किया जायेगा। इसका पहला चरण जुलाई, दूसरा सितम्बर तथा तीसरा नवम्बर में आयोजित किया जायेगा। इस वर्ष का प्रशिक्षण पशुओं की पारम्परिक चिकित्सा पद्धति पर आधारित रहेगा। कृपाविस टीम के अलावा आन्ध्रा पूणे (हैदराबाद) की टीम द्वारा प्रशिक्षण दिया जायेगा। इस प्रशिक्षण में दूर–दराज के गाँवों से शिक्षित 20 युवाओं (महिला/पुरूष) का चयन किया जायेगा।

इस प्रशिक्षण में पशुओं के स्वास्थ्य पर पारम्परिक ज्ञान रोकथाम, उपचार आदि पर अभ्यास किया जायेगा। समुदायों के पास, स्वदेश ज्ञान है जिसको इस प्रशिक्षण के माध्यम से बढावा दिया जाएगा। पशुधन आवास, चारा, चराई प्रबन्धन व्यवस्था रोगों की पहचान व उनकी रोकथाम व उपचार पर युवाओं दक्षता बढायी जायेगी। प्राथमिक चिकित्सा औषधीय पौधों के संग्रह का स्थायी तरीका, देशी दवाईयां बनाने की विधि आदि पहलू प्रशिक्षण के हिस्से होंगे।

प्रशिक्षण के प्रथम चरण (जिसे मॉडल 1 कहेंगे) में निम्न बिन्दूओं पर प्रशिक्षण दिया जायेगा।

- देशी ज्ञान, देशी पशु चिकित्सा पद्धतियों समुदाय में भिन्नताओं, लिंग आदि के चित्रण का मिलान।
- प्रथाओं और आनुवांशिक संसाधनों का क्षरण–स्थानीय अनुभव
- ज्ञान के मौखिक परम्पराओं, वहाँ लिखा प्रलेखन के लिए एक ही जरूरत है।
- भागीदारी प्रलेखन और दृष्टिकोण सिखने पशुओं और प्राकृतिक संसाधनों अच्छे स्वास्थय के लिए पूर्वापेक्षाए के बीच सम्बन्ध
- प्रलेखन के लिए विकासशील प्रारूप

प्रशिक्षण के द्वितीय चरण यानी मॉडल–2 में निम्न बिन्दु पर प्रशिक्षण दिया जावेगा:

- पशुओं के रोगों का परिचय
- पशुओं (गाय, भैंस, भेड, बकरी) में पाचन प्रणाली और भूख न लगाना, पेट का दर्द, दस्त, चॉक लगना प्रभावित रोग के कारण, लक्षण, रोकथाम और प्राथमिक चिकित्सा
- औषधीय पौधों की तैयारी

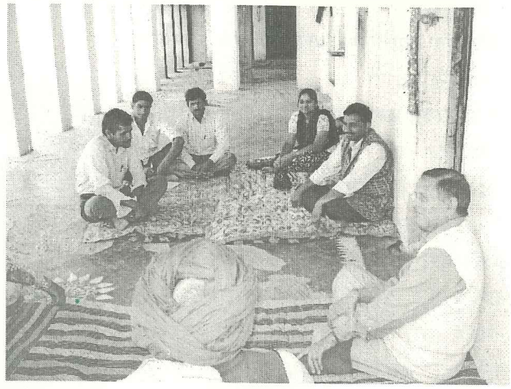

इस प्रशिक्षण के अंतिम चरण यानी मॉडल–3 में निम्न विषय सम्मिलित किये गये है:

- पूर्व के 2 मॉडल की समीक्षा तथा चिकित्सकों द्वारा जैव डाटा तैयार करना, उपचार और जानकारी का विश्लेषण आदि।
- पशुधन में श्वसन और संचार प्रणलियों, एच.एस. BQ, FMQ, PPR आदि के कारणों, लक्षणों, रोकथाम जैसे संक्रामंक रोगो को समझना व टीकाकरण पर चर्चा।
- स्वास्थ्य कार्यक्रम में भूमिकाओं, पारम्परिक ज्ञान, पशु चिकित्सा पद्धति, उपचार रोकथाम आदि पर दस्तावेजीकरण तथा समुदायों के साथ प्रारूपों का अभ्यास करना।
- देशी दवाओं का बनाना, उपयोग करने के तरीकों का परिचय।

ओरण फोरम कार्यशाला

ओरण व देवबनियो के कानूनी पहलूओं को प्रभावित करने वाले विभिन्न अधिनियम व राजस्थान वन नीति को लेकर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन जुलाई 2010 में करने का तय किया गया है। इस कार्यशाला में निम्न तीन बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा होगी।

- राजस्थान राज्य वन नीति 2010
- वन अधिकार अधिनियम 2006, तथा
- जैव विविधता संरक्षण अधिनियम 2006

अतः ओरण फोरम के सभी सदस्यों व अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों तथा संस्थाओं से निवेदन है कि अपनी भागीदारी की अग्रिम सूचना भेजे।

सरिस्का चरवाहा समुदाय और जंगल संरक्षण

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस) द्वारा 17–19 मार्च 2010 को सरिस्का चरवाहा समुदायों की कार्यशाला आयोजित की। इसका उद्देश्य था कि सरिस्का क्षेत्र में चरवाहा समुदायों को उनको उनके वन संरक्षण व आजीविका अधिकार मिलें। इस कार्यशाला में सरिस्का क्षेत्र के विभिन्न 21 गाँवों से चरवाहा समुदायों के लगभग 60 लोगों ने भाग लिया। देश के जाने माने पर्यावरण विद्ध कल्पवृक्ष के श्री आशीष कोठारी, डॉ. नीमा पाठक तथा श्रीमती गुप्ताभाया ने भाग लिया। यह कार्यशाला कृपाविस बणी बख्तपुरा में रखी गयी।

गाँव वालों में कहा कि हम जंगल में परम्परागत रूप से रहते आये है हमारा जंगल से घनिष्ट सम्बन्ध है। हम जंगल बचाते है और पशुपालन से हमारी आजीविका चलाते है हमको जंगलात विभाग वाले हमारे अधिकारों को दबा कर हम से मनमानी करते हैं। हमकों यहाँ हटाने पर सरकार के पास हमको जमीन देने को नहीं है अर्थात् हम यहाँ से नहीं हटना चाहते है। हमने पशुओं को शिफ्ट करने का नियम बना रखा है। पशुओं को जंगल से शिफ्ट करते हैं। जिससे जंगल बचता है। अगस्त से नवम्बर तक पहाड़ से नीचे राड़ा में रखते, इसके बाद दिसम्बर से मार्च तक पहाड माला पर रखते हैं। चार महिना अप्रेल से जुलाई तक समतल भूमि पर रखते हैं। जब एक तरफ जंगल से घास चारा लिया जाता है तो दूसरा जंगल बच जाता है। जब दूसरा जंगल से घास चारा लिया जाता है। तो पहला जंगल बच जाता है। इस नियम से जंगल बचाते है। पेड़ से गिरे हुए पत्ते एवं सूखी घास को पशुओं खिलाते है। इससे पेड़ नहीं कटते है। झडी हुई पेड की पत्तियों को पशु खाते है। हम हमारे पशुओं को लेकर हरियाणा तक जाते है।

चरवाहा समुदाय को वन हक अधिनियम के बारे में बताया कि इस कानून के अन्तर्गत 13 हक कानून है। जो विद्यालय, औषधालय, सड़क आदि कानून हक अधिकार में आता है। गाँव वालों का कहना है कि हम जंगल बचाना चाहते हैं और हमको वन संरक्षण का अधिकार मिलना चाहिए देवबणी को बचाने का काम तो हम करते है हम पेड़ लगाते है। लेकिन कई जगहों पर देवबणी पर वन कर्मचारी वृक्षारोपण नहीं करने देते हैं। हम ऐसा सोचते है कि देवबणी के साथ सरिस्का जंगल भी बच सकें। कानून हक के कुछ नियम डॉ० नीमा पाठक और आशीष कोठारी ने बताये और कहा कि हमको ग्राम सभा में तय करना चाहिए तथा गाँव के लोग एक जुट होकर यह तय कर लें कि हमको यहाँ से निकलना है या यही रहना है।

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस), बख्तपुरा, अलवर (राज०) द्वारा जनहित में प्रसारित।
इस पत्रिका के लिए सहयोग 'भारतीय बाजरा नेटवर्क/ डी.डी.एस.' से प्राप्त।
मुद्रक: जय बाबा प्रिन्टर्स, स्टेशन रोड़, अलवर। लेआउट सहायक : बनवारी लाल कोली